पाठ्यपुस्तकें जीवन की समझ पैदा करती हैं

*स्नेहलता प्रसाद**

पाठ्यपुस्तकें बच्चों के लिए उस संसार के द्वार खोलती हैं जो उनकी कोमल भावनाओं को आकार देता है, उनकी नादानियों को समझदारी के धरातल से स्पर्श कराता है। शब्दों में अपनी बात व्यक्त कर पाने में असहजता महसूस कर बालक शब्दों से बोलना, सीखना एवं समझना शुरु करते हैं। पुस्तकें बच्चों को अपने परिवेश की प्राकृतिक, सामाजिक व अन्य परिस्थितियों से मेल कराती हुईं अनेक नव अनुभवों से परिचय कराती हैं जो उम्र की सीमाओं में अभिव्यक्त नहीं हो पाते हैं। एनसीईआरटी द्वारा प्रकाशित पुस्तकें इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में एक प्रयास हैं। प्रस्तुत लेख यही अभिव्यक्त करता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 सुझाती है कि स्कूली शिक्षा मात्र किताबी ज्ञान ही न रह कर विद्यार्थियों को सही अर्थ में ज्ञानवान बनाए जिससे वे बाहर की दुनिया से उस ज्ञान को जोड़ कर देख सकें। किताब प्रदत्त ज्ञान उन्हें सोचने, समझने और परखने की दिशा प्रदान कर सके। वे किताब रटकर मात्र परीक्षा में उसे उलट कर कक्षा उत्तीर्ण कर लेने को ही शिक्षा न समझें। शिक्षा वास्तव में हमें एक दृष्टिकोण देती है जिसके कारण हम अपने आस-पास की वस्तुओं, परिवेश, पर्यावरण, सामाजिक दायित्त्व, सांस्कृतिक धरोहर आदि अनेक बातों के प्रति जागरूक बनते हैं।

शिक्षा का उद्देश्य है कि हम और कुछ बने या न बनें परंतु सही मायनों में एक इंसान अवश्य बने जो मानवीयता की उष्मा से भरपूर हों। आज लोग संवेदनशून्य हो गए हैं। यह उदासीनता या तटस्थता स्वस्थ समाज का चित्र प्रस्तुत नहीं करती। पहले किसी के घर में कोई संकट आ पड़ता था तो सारा गाँव या आस-पड़ोस उसमें शामिल हो जाता था। किसी की बेटी की शादी हो तो पूरा गाँव अथवा आस-पड़ोस

*प्रवाचक ,भाषा विभाग, एनसीईआरटी, नई दिल्ली

अपने-अपने हिसाब से मदद करने को खड़ा हो जाता था।

आज हम की गंध को भूल झूठी चकाचौंध और सिंथेटिक परफ्यूम की ओर भागने लगे हैं।

हाल में ही एन.सी.आर.ई.टी. द्वारा बनाई गई हिंदी विषय की किताबों में इस बात का ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थी स्कूली ज्ञान को अपने जीवन के दिन-प्रतिदिन के अनुभवों से जोड़ सकें। इन किताबों के लिए नए पाठ्यक्रम पर आधारित पाठों को चुनते समय भरपूर चिंतन किया गया कि प्रत्येक पाठ ऐसा हो जिसे विद्यार्थी पढ़कर महसूस करे कि वह जो ज्ञान ले रहा है उसमें उसके अपने अनुभव भी शामिल हैं और वह उन अनुभवों का विश्लेषण कर प्राप्त ज्ञान को और अधिक समृद्ध कर सकता है। उदाहरण के लिए कक्षा नौ की हिंदी 'ब' कोर्स की पाठ्यपुस्तक 'स्पर्श भाग' 1 में दो रचनाएं रखी गईं हैं -'धूल' और 'कीचड़ का काव्य'।

धूल नामक पाठ बताता है कि मानव सहित पेड़, पौधे, जीव-जंतु सभी इसी माटी की उपज हैं। यह माटी संघर्ष में विजयी हुए माटी के सपूतों की ललाट पर गर्व की भांति दमकती भी है। इस माटी को पहचान देती है यह धूल। जैसा पुस्तक में कहा गया है कि धूल की मिट्टी की आभा है यही आभा मिट्टी के रंगरूप को पहचान देती है।

'कीचड़ का काव्य' नामक रचना यह बताती है कि मिट्टी से बना कीचड़ हमें अन्न देता है तो फिर जीवन में जिस मिट्टी, धूल और कीचड़ से हम बचना चाहते हैं, उसे तुच्छ मानते हैं, उसका हमारे जीवन में कितना महत्व है हमारे युवावस्था की ओर बढ़ते विद्यार्थियों को मिट्टी की ज़मीनी हकीकत का अनुभव कराते ये दोनों पाठ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। परंतु, इन पाठों के प्रति कुछ अध्यापकों ने जो विचार प्रकट किए हैं उसके अनुसार ये पाठ बहुत कठिन हैं तथा कीचड़ का काव्य नामक पाठ नीरस है। उनका कहना था कि विद्यार्थी इन पाठों को पढ़ने में रुचि नहीं लेते।

यहाँ पर यह उल्लेख करना अत्यंत आवश्यक प्रतीत होता है कि शिक्षकों को यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि विद्यार्थियों के किसी पाठ में रुचि न लेने के कारण क्या हैं? जहाँ तक पाठों के कठिन और नीरस होने का प्रश्न है तो साहित्य के संदर्भ में हम इतना तो समझते हैं कि रचनाकार जब किसी रचना को कलमबद्ध करता है तो वह अपनी पूरी कल्पनाशक्ति लगा देता है। वह अपनी रचना को हमारे सामने रखने के पूर्व जाँचने, परखने, बारीक निरीक्षण करने के साथ, उस पर चिंतन-मनन भी करता है। अतः उसकी रचना, एक रचना प्रक्रिया का उत्पाद होती है।

समाज के विभिन्न पहुलओं को बारीकी से देखते हुए, विश्लेषण करते हुए शब्दों में पिरोना-एक लेखक बखूबी करता है। फिर कोई रचना नीरस या कठिन कैसे हो सकती है? हमारे दृष्टिकोण रचना को नीरस बनाते हैं। विद्यार्थी किसी पाठ में दी हुई विषयवस्तु से स्वयं को संबंधित किए बिना रुचि नहीं ले पाते हैं। यदि शिक्षक किसी पाठ को विद्यार्थियों के सामने इस

प्रकार प्रस्तुत करे कि विद्यार्थियों को महसूस हो कि उक्त विषयवस्तु उनके स्वयं के अनुभवों से जुड़ीं हैं तो उन्हें बार-बार पढ़कर रटने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। वे अपने सामाजिक परिवेश की घटनाओं, वस्तुओं और लोगों के साथ विषयवस्तु को जोड़कर सीखने की दिशा में समझ का आनंद लेते हुए उत्तरोत्तर प्रगति कर सकेंगे।

आइए हम एक बार फिर 'धूल' नामक पाठ की बात करते हैं। हम सब जानते हैं कि इसी धूल-मिट्टी में खेल हम बड़े हुए। कृष्ण की बाल लीला का वर्णन करते हुए सूरदास कहते हैं–

घुटरुन चलत रेणु तन मंडित
मुख दधि-लेप किए।

उस दृश्य की कल्पना कीजिए कि रेणु अर्थात् धूल से सने सुशोभित शरीर वाले घुटनों के बल चलते हुए मुँह पर दही लपेटे हुए बाल कृष्ण दही की हंडिया पर हाथ साफ कर चले आ रहे हैं। अब इस दृश्य को देख किसका मन उन्हें गोद में उठा छाती से लगा चूम लेने का न करेगा। सभी को धूल में सने घुटने चलते बच्चों में कृष्ण की यही छवि दिखाई पड़ती है। तभी तो कहा है-

धन्य धन्य वे हैं मैले जो करत गात कनिया
लगाए धूरि ऐसे लरिकान की।

तो फिर वही धूल जो इतनी आनंदकारी हो उसे विषयवस्तु के रूप मे देकर जीवन के अनुभवों से जोड़कर विद्यार्थियों के सामने रखा जाये तो शायद कक्षा जीवंत हो उठेगी। इसे समझने और समझाने के लिए तरह-तरह के उदाहरण दिए जा सकते हैं जैसे–संध्याबेला में घर लौटतीं गायों के खुरों से उठती धूल गोधूलि कहलाई और जो सांझ ढले घर के लोगों के काम से लौटने, घर पर व्याप्त दिनभर के सूनेपन को चहल-पहल में बदलने और चूल्हा-चौका की तैयारी का संकेत दे गृहिणी के तन-मन में अपने प्रियजनों–माता-पिता, भाई-बहिन, पति, बच्चों एवं अन्य परिजनों के लिए स्वादिष्ट पौष्टिक आहार बनाने की तत्परता भर देती है। वह धूल अनचाही कैसे हो सकती है जो जीवन में विविध प्रकार के हास-उल्लास भरती है।

कुश्ती लड़ने वाले अखाड़े की मिट्टी को माथे से लगा धूल में लोट-पोट हो जीवन का आनंद उठाते हैं। हाल ही में समाचारों में चर्चा में आये ब्रिस्टोल विश्वविद्यालय के क्रिसलोरी ने एक शोध में कहा है कि मिट्टी में विद्यमान साधारण जीवाणु लोगों की जैविक क्षमता बढ़ाते हैं। यह पाया गया है कि जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में जीवाणुओं का अधिक सामना आगे चलकर स्वस्थ विकास तथा शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को विकसित करने में सहायता करता है। धूल, मिट्टी, वर्षा, पानी, धूप शीत सभी का हमारे जीवन में अहम महत्व है। यहाँ यह बात और अधिक महत्व रखती है कि कक्षा में विषयवस्तु कैसे प्रस्तुत की जाती है।

अब 'कीचड़ का काव्य' शीर्षक से दिए पाठ पर एक दृष्टि डालते हैं। पाठ 'कीचड़ का काव्य' तो अपने में एक काव्य ही समेटे हुए है। बस देखने वाले की पारखी दृष्टि चाहिए। वह कमल कीचड़ में ही खिलता है जिससे मुख की

समता की जाती है। कमल की पंखड़ियों समान नेत्र सौंदर्य का वर्णन किया जाता है। कविवर निराला 'राम की शक्ति पूजा' में कहते हैं कि जब राम की अर्चना में एक कमल कम हो गया तब सहसा उन्हें याद आता है कि माँ मुझको राजीव लोचन कहती थी और वह अपना नेत्र कमल अर्पित करने को तत्पर हो जाते हैं। बिखरा हुआ कीचड़, कीचड़ उछालना, कीचड़-कीचड़ कर देना अच्छा नहीं होता। पर हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। मिट्टी को पानी से सान कर ही कुम्हार पात्र गढ़ता है, मूर्ति बनाता है, खिलौने बनाता है, घरेलू उपयोग के बर्तन बनाता है।

आज खनिज की लोगों को कमी महसूस हो रही है। पहले लोग कुल्हड़ में चाय, पानी आदि पीते थे, मिट्टी की परात मे दही जमाई जाती थी, मिट्टी के बरतन में दूध औंटाया जाता था, मिट्टी की हंडिया में भोजन पकता था। अपने आप ही उस धरती की मिट्टी में व्याप्त खनिज मिल जाता था। आज प्लास्टिक, थर्मोकोल के कप, गिलास, प्लेट आदि में लोग चाय, पानी पीते हैं और उसी से बनी प्लेटों (पत्तलों) में खाना खाते हैं। लोगों के जीवन से पानी भीगी मिट्टी की सौंधी गंध ही नहीं उड़ी मनुष्यता की ऊष्मा भी उड़ गई है।

कीचड़ में धान की पौध की रोपायी की जाती है। भारत के पूर्व और पूर्वोत्तर प्रदेश के साथ-साथ पश्चिम बंगाल, पंजाब आदि क्षेत्रों में चावल की खेती की जाती है। भारत की ज्यादातर जनसंख्या का आहार चावल ही है। आज खेती के लिए भले ही नलकूप से काम चल जाता है पर धान पाने के लिए कीचड़ में तो धंसना ही पड़ेगा। इस सच्चाई को नकारा नहीं जा सकता। कीचड़ के रंग में गंदगी छुपाने की भी अद्‌भुत क्षमता होती है। किताबों पर जिल्द चढ़ाने के लिए प्रयुक्त गत्ता इसी रंग का होता है, बच्चों की किताबों पर भी खाकी रंग का ही कवर चढ़ाया जाता है। देश की रक्षा करने वाले जवान भी इसी रंग के वस्त्र पहन प्रकृति में मिल दुश्मन का मुकाबला कर सकते हैं। कीचड़ के महत्व को समझने वाले अपने डिटर्जेंट के प्रचार हेतु कीचड़ का ही सहारा ले बताते हैं कि 'दाग अच्छे हैं'।

प्रकृति प्रदत्त सभी वस्तुएँ और स्वयं प्रकृति हमारे विकास के लिए अनिवार्य तत्व हैं। जिसे हमारी कक्षाओं में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे न केवल विद्यार्थियों की इसमें रुचि बढ़े वरन् वे स्वयं प्रकृति का अवलोकन कर नई-नई विमाओं की कल्पना कर सकें।

आइए इसी पुस्तक के कुछ और पाठों के बारे में जानते हैं। कक्षा नौ (कोर्स 'ब') की पाठ्यपुस्तक स्पर्श भाग 1 में सम्मिलित पाठ 'दु:ख का अधिकार' ग़रीबों के दु:खों की उन परतों को सामने रखता है जो समाज द्वारा विभाजित दीवारों में छिपी रह जाती हैं। वह जानता है कि संसार में दु:ख की विभीशिकाएं किन्हीं सीमाओं के बंधनों में बंधी नहीं रहती हैं परंतु साधन संपन्न की अपेक्षा साधनविहीन पर इसका प्रभाव ज्यादा पड़ता है। दु:ख के अनछुए पहलुओं का चित्रण बच्चों के अंतस को गहराई से प्रभावित

कर अधिक संवेदनशील बनने की सीख देता है। इससे बच्चों की सामाजिक परिस्थितियों को समझने की क्षमता बढ़ती है। स्पर्श भाग-1 में ही सम्मिलित पाठ 'वैज्ञानिक चेतना के वाहक चंद्रशेखर वेंकट रामन्' के संदर्भ में भी अध्यापकों का कहना है विज्ञान में आज इतनी अधिक प्रगति हो गई है कि उस के परिदृश्य में यह पाठ समसामयिक नहीं लगता। अत: इसे पढ़ाने की क्या आवश्यकता है?

यहाँ अध्यापक बंधु यह अवश्य ध्यान रखें कि आज विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति कर हम जहाँ पहुँचे हैं, वहाँ हम थॉमस अल्वा एडीसन, जार्ज स्टीफेन्सन, राइट ब्रदर्स, न्यूटन, आइंस्टाइन, आर्कमिडीज और वेंकट रामन् के अन्वेषणों, अनुसंधानों और उनकी गवेषणात्मक जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण ही पहुँचे हैं। इनके अविष्कारों का महत्व ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार बिना नींव के भवन के निर्माण की कल्पना करना भी असंभव है अत: बिना इनकी खोजों को जाने-बूझे विज्ञान के समसामयिक ज्ञान को समझना भी कठिन होगा।

इस पाठ द्वारा एक अनुसंधानकर्ता की गवेषणात्मक प्रवृत्ति के साथ-साथ हमें अपने लक्ष्य प्राप्ति की उत्कंट ललक, लगन और अटूट विश्वास के महत्व को भी समझने का अवसर मिलता है। किसी निश्चित लक्ष्य के प्रति यदि मन में दृढ़ संकल्प हो तो कुछ भी पाना असंभव नहीं है। बस मन में लग्न, निष्ठा और अपने पर विश्वास हो तो फिर कोई भी मंजिल क्यों न हो वह हमारी पहुँच से बाहर नहीं रह सकती।

इस पाठ द्वारा हमें यह भी पता चलता है कि महान व्यक्तित्व संपन्न लोग चाहे किसी भी बुलंदी पर क्यों न पहुँच जाएँ, वे अपनी सभ्यता और संस्कृति की गरिमा सदैव बनाए रखते हैं। पाठ वैज्ञानिक जानकारी के साथ-साथ हमें जीवन शैली के प्रति भी सचेत करता है। अत: पाठ को पाठ तक सीमित न रख उसे जीवन से जोड़ना चाहिए। अगर सामर्थ्य हो तो दूसरों की मदद कर उनके विकास का मार्ग भी सर रामन् की तरह प्रशस्त करना चाहिए।

बच्चों के सामाजिक परिवेश में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले 'रिश्तों' का चित्रण करता हुआ बड़े भाई साहब अध्याय कक्षा दस ब की हिंदी पाठ्यपुस्तक 'स्पर्श भाग 2' में है जिसमें छोटे भाई की मनोस्थिति का सुंदर चित्रण किया गया है। उम्र और समझदारी के पैमाने पर छोटे भाई के समक्ष उत्पन्न हो रहा द्वंद बच्चों के मनोभावों से सीधे जा जुड़ता है। बच्चों के समक्ष, पढ़ाई और खेलकूद के मध्य संतुलन का एक अनुकरणीय उदाहरण छोटे भाई की सफलता के रूप प्रस्तुत होता है।

'बड़े भाई साहब' समय प्रबंधन के प्रति सचेत कर दर्शाता है कि जीवन में खेल-कूद और पढ़ाई दोनों के महत्व को समझते हुए अपनी प्राथमिकताओं के अनुसार सभी को समय देना चाहिए। इस बार दसवीं बोर्ड की परीक्षा परिणाम घोषित होने पर 98% अंक प्राप्त करने वाले बाल भवन सीनियर सैकेंडरी स्कूल, दिल्ली के छात्र रोहित गुप्ता ने एक समाचार पत्र 'टाइम्स ऑफ इंडिया' (30.5.07) को बताया कि वह

स्कूल से आकर दोपहर को सोता भी था, शाम को बाहर जाकर खेल-कूद इत्यादि अन्य विभिन्न गतिविधियों में भी हिस्सा लेता था और फिर बाकी समय जमकर पढ़ता था, उसने कोई कोचिंग भी नहीं ली। अत: इससे छात्र जीवन में समय के महत्व को समझ सकता हैं। साथ ही दिनचर्या निर्धारित करने के सुखद परिणाम को बखूबी समझा जा सकता है।

हमें जीवन में समय बाँधकर काम करना चाहिए। अध्यापकों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों का ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट करें कि दिन-रात भी अपनी-अपनी समय सीमाओं में बंधे आते-जाते हैं। ऋतुएं भी निर्धारित समय पर अपने अपने क्रम से आती-जाती हैं। घर-बाहर की दिनचर्या भी सुबह, दोपहर, शाम और रात में बंटी रहती है और हम सभी उसी के अनुसार काम करते हैं। अत: छात्रों को समय का पालन भली प्रकार से करना चाहिए।

इस कहानी में शिक्षा पद्धति और परीक्षा प्रणाली पर कड़ा व्यंग्य है। अत: अध्यापकों को शिक्षा और प्रतिष्ठा के प्रति अपना नज़रिया बदल कर एक लचीलेपन को अपनाना चाहिए।

इसी पुस्तक में 'अब कहाँ दूसरों के दु:ख से दु:खी होने वाले' नामक पाठ पर्यावरण संतुलन और प्राकृतिक संपदाओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए हमें प्रकृति से छेड़छाड़ कर उसके दुष्परिणामों के प्रति सचेत करता है और विद्यार्थियों को प्रकृति के प्रति संवेदनशील बनाते हुए पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु जागरूकता पैदा करने का प्रयास करता है। आखिर कल आने वाली पीढ़ियों को ही अपनी सुरक्षा हेतु वन्य-प्राणियों और प्राकृतिक संपदाओं को भरपूर बनाए रखना है जिससे पर्यावरण असंतुलन के खतरे से बचा जा सके। आज ग्लोबल वार्मिंग के कारण सभी चिंतित हैं। अत: उस खतरे से बचने के लिए बच्चों में पर्यावरण संबंधी संचेतना पैदा करना आवश्यक है।

अध्यापक बंधुओं से आग्रह है कि अब समय बदल गया है। अत: पाठ्यपुस्तकों में सम्मिलित पाठों को परीक्षा के नजरिए से न पढ़ा कर उसे इस प्रकार पढ़ाएं कि छात्र अपने परिवेश को समझ सकें। उसे इस बात का अहसास कराना चाहिए कि संसार में कुछ भी तुच्छ एवं महत्वहीन नहीं है। बस उसे देखने के लिए दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना जरूरी है।